मध्यकालीन राजस्थानी काव्य के विकास में कवयित्रियों का योगदान

□ डॉ० शान्ता भानावत

राजस्थानी साहित्य शौर्य, शक्ति और भक्ति का साहित्य है। इसने प्रत्येक नर-नारी को त्याग, बलिदान, साहस, वीरता एवं धर्म की रक्षा का पाठ पढ़ाया। यहाँ के युगल प्रेमी दाम्पत्यधर्म की पवित्रता और सतीत्व की रक्षा के लिये मर मिटे हैं। यहाँ की नारी पुरुष को कर्त्तव्यपालन की प्रेरणा ही नहीं देती वरन् अवसर आने पर स्वयं हाथ में तलवार भी उठाती है। युद्धक्षेत्र से परास्त होकर पति के भाग आने पर वह उसे ऐसी व्यंग्योक्तियाँ सुनाती हैं कि उसके कायर दिल में बिजली का वेग दौड़ पड़ता है। भक्तिक्षेत्र में भी यहाँ के साहित्य ने भक्त और भगवान् के मधुर सम्बन्धों को वाणी दी है तो रीति के क्षेत्र में कई नवीन काव्यशास्त्रीय मानदण्ड स्थापित कर अपना विशिष्ट व्यक्तित्व प्रतिफलित किया है।

राजस्थान में साहित्यसृजन के क्षेत्र में महिलाएँ पीछे नहीं रहीं। यहाँ की विदुषी कवयित्रियों का साहित्य वीर, भक्ति और शृंगार भावों से भरापूरा है। यहाँ १४ वीं शती से १९ वीं शती के मध्य होने वाली कवयित्रियों का साहित्यिक परिचय संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

अध्ययन की सुविधा के लिए मध्यकालीन विभिन्न धाराओं की कवयित्रियों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

१. डिंगल काव्यधारा की कवयित्रियाँ
२. रामकाव्यधारा की कवयित्रियाँ
३. कृष्णकाव्यधारा की कवयित्रियाँ
४. निर्गुणकाव्यधारा की कवयित्रियाँ
५. जैनकाव्यधारा की कवयित्रियाँ।

१. डिंगल काव्यधारा की कवयित्रियाँ

इस धारा की कवयित्रियों की मुख्य भाषा डिंगल (राजस्थानी की चारण शैली) है। इन कवयित्रियों का सम्बन्ध मुख्यतः राजघरानों या चारण परिवारों से रहा है। इनकी कविताओं में प्रमुख रूप से वीर और शृंगार रस की अभिव्यंजना हुई है। इन कवयित्रियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से एक ओर राजाओं में साहित्यानुराग पैदा किया तो दूसरी ओर संयोग-वियोग में उठने वाले भावों द्वारा नायक-नायिकाओं के हृदय की धड़कन को पहचाना। जिस प्रकार चारण कवियों की लेखनी ने रणबांकुरे राजाओं को युद्धभूमि में उत्साहित कर वीरोचित भावनाएँ भरीं वैसे ही इन कवयित्रियों ने घर बैठे अपनी कविताओं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

द्वारा राजाओं को अपनी विस्मृत शक्ति का ज्ञान कराया। इस धारा की प्रमुख कवयित्रियाँ निम्नलिखित हैं—

१. झीमा चारणी (रचनाकाल सं० १४८० के आसपास)

यह कच्छ देश के अंजार नगर निवासी वरसड़ा शाखा के मालव जी नामक चारण व्यापारी की कनिष्ठा पुत्री थी। एक चारण युवक ने इनका अपमान किया था तब से इन्होंने चारण युवक से विवाह न करने की प्रतिज्ञा ली थी। इसी कारण इनका विवाह जैसलमेर के तणोट निवासी भाटी बुध के साथ हुआ था।

कवयित्री झीमा की लेखनी में अद्‌भुत बल छिपा था। अपनी कविता द्वारा प्रेरणा देकर उसने गागरोण गढ़ के राजा अचलदास खींची, जो लालादे के प्रेम में फँस गये थे, उन्हें सदा के लिए अपनी पत्नी उमा दे सांखली का बना दिया। हृदयस्थ भावों की मार्मिक अभिव्यक्ति इनके पदों में मिलती है। इनका जन्म एवं रचनाकाल १५ वीं शताब्दी है। भाषा, भाव, और अभिव्यक्ति की दृष्टि से डिंगल काव्यधारा में झीमा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनकी कविता के नमूने के रूप में दो दोहे यहाँ दिये जाते हैं—

१. धिन उमादे सांखली, तैं पिव लियो मुलाय।
सात बरस रो बीछड़ियो, तो किम रैंन विहाय॥
२. पगे बजाऊं घूघरा, हाथ बजाऊं तूंब।
ऊमा अचल मोलावियो, ज्यूं सावण री लूंब॥

२. पद्मा चारणी (र० का० सं० १५९७ के आसपास)

कवयित्री पद्मा चारणी ऊदाजी सांदू की सुपुत्री और शंकर बारहठ की पत्नी थी। बीकानेर के महाराजा कल्याणसिंह के पुत्र और रायसिंह के अनुज अमरसिंह का अन्तःपुर इनका आवास था। पिता और पति की भाँति डिंगल गीत और कवित्त लिखने में ये कुशल थीं। इनकी समस्त रचनाएं वीररस पूर्ण हैं। राजस्थानी भाषा के सुप्रसिद्ध अलंकार वयण-सगाई का निर्वाह इनके छन्दों में मिलता है। इनका जन्म एवं रचनाकाल १६ वीं शताब्दी है। सोये अमरसिंह को युद्ध की प्रेरणा देने वाली इनकी कविता का नमूना देखिये—

बीकहर सीहघर मार करतो बसु,
अमंग अर वृन्द तौ सीस आया।
लाग गयणाग भुज तोल खग लंकाल,
जाग हो जाग कलियाण जाया॥

३. चाम्पादे रानी (र० का० वि० सं० १६५०)

कवयित्री चाम्पादे जैसलमेर के महारावल हरराज की पुत्री और बीकानेर के प्रख्यात कवि राठौड़ पृथ्वीराज की पत्नी थीं। काव्यसृजन की प्रेरणा इन्हें अपने पितृगृह से ही मिली थी। महारावल हरराज के दरबार में कवियों का बड़ा आदर था। वहाँ काव्यकृतियों का निर्माण निरन्तर चलता रहता था। ऐसे साहित्यिक वातावरण में चाम्पादे की काव्य प्रतिभा को बड़ा बल मिला। इनके और पृथ्वीराज के काव्यविनोद की कई आख्यायिकाएं प्रसिद्ध

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हैं। कहा जाता है कि एक बार पृथ्वीराज को दर्पण में अपने सिर पर एक सफेद बाल दिखाई दिया जिसे उन्होंने उखाड़ कर फेंक दिया। इनकी इस चेष्टा पर, पीछे खड़ी चाम्पादे को हँसी आ गई जिसे पृथ्वीराज ने दर्पण में देख लिया। इस पर उन्होंने यह दोहा कहा—

पीथल धोळा आविया, बहुली लग्गी खोड़।
पूरे जोबन पद्मणी, ऊभी मुक्ख मरोड़॥

अपने पति की ग्लानि को मिटाने के लिए चाम्पादे ने तत्काल ही कुछ दोहे कहे जिनमें से एक यह है—

प्यारी कहे पीथळ सुणो, धोळा दिस मत जोय।
नरां नाहरां डिगमरां, पाकां ही रस होय॥

४. रानी राड़धरी जी (र० का० सं० १६५०)

कवयित्री राड़धरी जी मारवाड़ के राड़धड़ा प्रांत के राणा की पुत्री और सिरोही के रावजी की पत्नी थीं। राजा और रानी दोनों ही काव्यानुरागी प्रकृति के थे। इसलिए उनका अधिकांश समय काव्यसृजन में ही व्यतीत होता था। छन्द और अलंकार शास्त्र का आपको अच्छा ज्ञान था।

५. बिरजू बाई (र० का० सं० १८००)

कवयित्री बिरजू बाई कविराजा करणीदान की द्वितीय पत्नी थीं। इनका रचनाकाल वि० सं० १८०० के आसपास है। बिरजू बाई समय-समय पर कविताएँ लिख कर चारण कवियों को दे दिया करती थीं। कई कवि उन्हें अपनी बता कर जागीरदारों से पुरस्कार पाया करते थे। भाव और भाषा की दृष्टि से इनकी रचनाएं बड़ी महत्त्वपूर्ण हैं।

६. हरिजी रानी चावड़ी (र० का० सं० १८७५ से पूर्व)

कवयित्री हरिजी रानी का जन्म गुजरात के एक चावड़ा राजपूत कुल में हुआ था। ये जोधपुर के प्रतापी राजा मानसिंह की द्वितीय रानी थीं। इन्होंने उत्कृष्ट भावपूर्ण शृंगाररस के गीतों का सृजन किया। इनके लिखे ख्याल, टप्पे और गीत विविध राग-रागिनियों में मिलते हैं। लोकगीत और संगीत पर हरिजी रानी का अच्छा अधिकार था। इसीलिये इनके पदों में गेयता आ गई है। एक उदाहरण देखिये—

बेगा नी पधारो म्हारा आलीजा जी हो।
छोटी सी नाजुक धण रा पीव।
ओ सावणियो उमंग रह्यो जी।
हरिजी ने ओढण दिखणी रो चीर॥
इण ओसर मिलणो कद होसी,
लाड़ी जी रो थां पर जीव॥

इस धारा की अन्य कवयित्रियों में काकरेची जी (१८ वीं शती का मध्य काल) राव जोधाजी की सांखली रानी (१९ वीं शती का उत्तरार्ध) आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. रामकाव्यधारा की कवयित्रियाँ

जिस प्रकार तुलसी ने अपने आराध्य राम के चरणों में अपनी काव्यांजलि अर्पित की वैसे ही यहाँ की कवयित्रियों ने भी राम के चरित्र को लेकर अपनी भावाञ्जलि चढ़ायी। यहाँ नारी ने सीता को केन्द्रबिन्दु मानकर अपने हृदयस्थ भावानुरूप रामकाव्यविषयक ग्रन्थों का सृजन कर रामभक्तिभावना को उत्तरोत्तर आगे बढ़ाने में विशेष सहयोग प्रदान किया। राधा और कृष्ण के प्रति भक्तिभाव दर्शाने में भी इन कवयित्रियों ने उदारता का परिचय दिया। इस काव्यधारा की प्रमुख कवयित्रियाँ निम्नलिखित हैं—

१. प्रताप कुंवरी (र० का० सं० १८७३ से १९४३)

प्रताप कुंवरी का जन्म जोधपुर के जाखण गांव निवासी भाटी गोयन्ददास के घर वि० सं० १८७३ में हुआ और निधन सं० १९४३ में। बचपन से ही ये बड़ी कुशाग्रबुद्धि की थीं। इनका विवाह जोधपुर के अधिपति मानसिंह जी के साथ हुआ था। इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं— ज्ञानसागर, ज्ञानप्रकाश, प्रताप पच्चीसी, प्रेमसागर, रामचन्द्रनाममहिमा, रामगुणसागर, रघुवरस्नेहलीला, रामप्रेमसुखसागर, रघुनाथजी के कवित्त, प्रतापविनय, हरिजसविनय आदि।

कवयित्री की भाषा सरल, सुबोध और सरस राजस्थानी है। छंद, अलंकार तथा राग रागनियों का अच्छा ज्ञान होने के कारण इनके पदों में लालित्य आ गया है। भावों की गहराई से भरा प्रताप कुंवरी का एक पद देखिये—

सियावर लाज हाथ है तेरे।
गहरा समन्द बीच है बेड़ा, कोउ सहाय न मेरे॥
बाजत पवन कठोर दुसह अति, मन धीरज न धरे।
टूटी नाव पुरानी जरजर, केवट दूर रहे रे॥

२. तुलछराय (र० का० सं० १८५० के आसपास)

कवयित्री तुलछराय जोधपुर के महाराजा मानसिंह जी की उपपत्नी थी। इनके लिखे फुटकर पदों से यह ज्ञात होता है कि ये राम की अनन्य उपासिका थीं। भाव, भाषा और शैली की दृष्टि से राम काव्य-धारा की कवयित्रियों में तुलछराय का भी गौरवपूर्ण स्थान है। विरहानुभूति कवयित्री के पदों का शृंगार है। वे सियावर से अपने दिल की बात सुनने का निवेदन करती हुई कहती हैं—

मेरी सुध लीजो जी रघुनाथ,
लाग रही जिय केते दिन की
सुनो मेरे दिल की बात,
मो को दासी जान सियावर
राखो चरण के साथ।
तुलछराय कर जोर कहे,
मेरो निज कर पकड़ो हाथ।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. बाघेली विष्णुप्रसाद कंवरी (र० का० सं० १८२१ के आसपास)

ये रीवां के महाराजा श्री रघुनाथसिंह की पुत्री और जोधपुर के महाराजा श्री जसवंतसिंह के छोटे भाई महाराज श्री किशोरसिंह की रानी थीं। इनका विवाह सं. १८२१ में हुआ था। इनके लिखे अवधविलास, कृष्णविलास, और राधाविलास ग्रंथ उपलब्ध हैं। ये रामस्नेही संप्रदाय के रामदास के शिष्य दयाल की शिष्या थीं। इनकी भाषा राजस्थानी है जिसमें ब्रजभाषा का सा मिठास है।

४. रत्नकुंवरी (र० का० सं० १९०० के आसपास)

कवयित्री रत्नकुंवरी जारवन निवासी भाटी लक्ष्मणसिंह जी की पुत्री, कवयित्री प्रताप-कुंवरी की भतीजी एवं ईडर के महाराजा प्रतापसिंह जी की महारानी थी। इनके लिखे पद शांत और शृंगाररस प्रधान हैं। रंगीले राम ने कवयित्री का मन मोह लिया है। रातदिन वह उन्हें ही स्मरण करती है। उन्हीं का ध्यान करती रहती है। उनके भक्तिभाव से प्रेरित एक पद का रसास्वादन कीजिये—

मेरो मन मोयो रंगीले राम।
उसकी छवि निरखत ही मेरो विसर गयो सब काम॥
अष्ट पहर मेरे हिरदे बिच, आन कियो निज धाम।
रतन कुंवर कहे उनको पलक पलक ध्यान करूं नित शाम॥

५. रूपदेवी (र० का० सं० १९०८ से १९२४)

कवयित्री रूपदेवी शाहपुरा निवासी अमरसिंह की पुत्री और अलवर के राजा विनयसिंह की रानी थी। इनके लिखे तीन ग्रंथ रूपमंजरी, राम रास, रूप रुकमणीमंगल मिलते हैं। छंदों की दृष्टि से दोहा और चौपाई का प्रयोग अधिक मिलता है। इनका प्रकृति-चित्रण भी अनूठा है। अनुप्रासों की सुन्दर छटा कवयित्री के प्रत्येक पद को सुन्दर बना देती है, देखिये—

सब मिल रास रच्यो मझ रात।
तट सरजू को तीर निकट अति, सहस सखा ले साथ॥
घुंघरू झनक झनकार सबद सुनि, चकित भयो ब्रह्म मुसकात।
संकर शक्ति चकित चित आतुर निरखि सरूप रघुनाथ॥

६. जादेची प्रतापबाला (र० का० सं० १८९१ से १९७४)

ये जामनगर के जाम श्री रिणमल जी की पुत्री और जोधपुर के महाराजा तख्तसिंह की रानी थी। इनका जन्म सं. १८९१ व विवाह १९०८ में हुआ। रामस्नेही संप्रदाय की अनुयायी होने पर भी कृष्ण के प्रति भी समान आदर भाव था। इन्होंने अपने अधिकांश पद चतुर्भुज श्याम को सम्बोधित करके लिखे हैं—

वारी थारा मुखड़ा री स्याम सुजान।
मन्द मन्द मुख हास्य विराजे कोटिक काम सजान॥

इनकी भाषा में ठेठ राजस्थानी का मिठास है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. चन्द्रकला बाई (र० का० सं० १९२३ से १९६५)

चन्द्रकला बाई बूंदी के राव गुलाबजी के घर की दासी थी। इनका जन्म वि० सं० १९२३ में बूंदी में हुआ और देहावसान सं० १९६५ में। ये आशु कवयित्री थीं। हिन्दी के 'रसिक मित्र' और 'काव्य सुधाकर' आदि तत्कालीन पत्रों में आपकी रचनाएँ प्रकाशित होती थीं। कवयित्री की रचनाओं से पता चलता है कि वह बड़ी विदुषी होने के साथ साथ छंद, अलंकार और शब्दशास्त्र की ज्ञाता थीं। इन्होंने करुणाशतक, पदवीप्रकाश, रामचरित्र, महोत्सव-प्रकाश आदि अनेक काव्यकृतियों की रचना की।

३. कृष्णकाव्यधारा की कवयित्रियाँ

हिन्दी और ब्रजभाषा में कृष्णकाव्यधारा का आविर्भाव प्रबल रूप से पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक बल्लभाचार्य के अष्टछाप की स्थापना के बाद हुआ। कृष्ण के प्रति जिस वात्सल्य, सख्य और दास्य भाव की व्याख्या बल्लभाचार्य ने जिन विविध रूपों में की, उन्हीं का अनुसरण सूरदास, कुम्मनदास, परमानन्ददास आदि अष्टछाप के कवियों ने किया। कृष्ण भक्तिधारा का सर्वाधिक प्रचार प्रसार सूरदास ने किया था। इन्होंने वात्सल्य से ओतप्रोत कृष्ण की मनोमुग्धकारी बाललीलाओं का चित्रण करके जनमानस का ध्यान नटवर नागर नन्दकिशोर की ओर आकर्षित किया। राजस्थानी कवयित्रियाँ भी कृष्णकाव्यधारा में अवगाहन किये बिना नहीं रह सकीं। इन काव्यधारा की प्रमुख कवयित्रियाँ निम्नलिखित हैं—

१. मीरा

मीरा मेड़ता के राठौड़ रतनसिंह की पुत्री और राव दूदाजी की पौत्री थीं। इनका जन्म संवत् १५६३ में हुआ। १३ वर्ष की आयु में मीरा का विवाह मेवाड़ के सुप्रसिद्ध राणा सांगा के ज्येष्ठ पुत्र कुंवर भोजराज के साथ कर दिया गया। यौवन की देहरी पर पैर धरते-धरते मीरा की जीवनधारा यकायक बदल गई। उनके पति परलोक चल बसे। मीरा अपने गार्हस्थिक बंधन तोड़ गिरधर की सेवा में रहने लगी। मीरा ने अपने आराध्य के चरणों में भावों की जो भावाञ्जलि चढ़ाई उसमें भक्तिभावनाओं का सहज स्पन्दन है। न उसमें कृत्रिमता है न दिखावा। मीरा की भक्ति दाम्पत्यभाव की थी। उसने कृष्ण को पतिरूप में माना और संयोग-वियोग की अनुभूति को विविध पदों में गाया। हिन्दी साहित्य में कबीर सूर, तुलसी आदि भक्त कवियों की भांति कवयित्री मीरा का भी गौरवपूर्ण स्थान है। इन पर अधिक चर्चा करना मात्र पिष्टपेषण होगा।

२. सोढ़ी नाथी (र० का० सं० १७२५ के आसपास)

सोढ़ी नाथी अमरकोट के राणा चन्द्रसेन की पोती, राणा भोज की पुत्री और जैसलमेर के पदच्युत रावल रामचन्द्र के महाराजा सुन्दरदास की पत्नी थीं। कवयित्री द्वारा रचित 'बालचरित' काव्य में ६२ राजस्थानी दोहे और सोरठों में कृष्ण की बाललीला का वर्णन किया गया है। 'कंसलीला' १०९ दोहों में लिखा गया काव्य है। कवयित्री ने कृष्ण के प्रति हृदय खोल कर अपनी भक्ति-भावना अर्पित की है। कृष्णभक्त कवयित्रियों में सोढ़ी नाथी का विशिष्ट स्थान है। अपने आराध्य के प्रति अटल विश्वास प्रकट करती हुई वे कहती हैं—

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नाथी निहचो मन धरै, मति तलफावे जीव ।
जे हरिजी हिरदे बसे, तो भरि भरि हरि रस पीव ।।

३. ब्रजदासी रानी बांकावती (र० का० वि० सं० १७७६ से १८२०)

महाराणी बांकावती कछवाह राजा आनन्दराय जी की पुत्री और किशनगढ़ के महाराजा राजसिंह की महाराणी थीं । आराध्य देव की भक्तिभावना में सराबोर होकर इन्होंने श्रीमद्भागवत का छंदोबद्ध राजस्थानी भाषा में अनुवाद किया जो आज भी 'ब्रजदासी भागवत' के नाम से सुविख्यात है । अनुवाद अत्यधिक सरस, सुबोध और प्रसादगुण युक्त है । कृष्ण का कवयित्री को इष्ट था और ये आठों याम कृष्ण ध्यान में पगी रहती थीं । वे कृष्ण की बार-बार वंदना करती हुई कहती हैं—

बार बार वंदन करौं, श्री वृषभान कुंवारी ।
जय जय श्री गोपाल जू, कीजै कृपा मुरारी ।।

४. गिरिराज कुंवरी (र० का० सं० १९२२ से १९८०)

भरतपुर की राजमाता गिरिराज कुंवरी का जन्म वि० सं० १९०२ में हुआ । कृष्ण के प्रति भक्ति-भावना का आविर्भाव उनके मानस में बाल्यावस्था से था । आपका लिखा 'ब्रजराज विलास' कृष्ण-भक्तिभावना से भरा अतीव सरस ग्रंथ है । कृष्ण-मिलन हेतु उनकी आत्मा सदैव आतुर रहा करती थी । सूर की भाँति इनके अनेक पदों में दैन्य भावनाएँ अभिव्यक्त हुई हैं—यथा—

मो सम कौन अधम जग मांही ।
सगरी उमर बिसयन में खोई, हरि की सुधि बिसराई ।
मन भायो सोई तो कीनो, जन में भई हँसाई ।।
काम क्रोध मद लोभ मोह के, घेरे हुए सिपाही ।
इन ते मोहिं छुड़ावो स्वामी, गिरिराज है सरणाई ।।

५. ब्रजभानकिशोरी (र० का० सं० १८८५ के आसपास)

ये जोधपुर के महाराजा तख्तसिंह की रानी थीं । इन्होंने कृष्ण की विविध लीलाओं का सरस पदों में वर्णन किया है । कुछ पंक्तियाँ देखिये—

धेनु संग आवत श्याम बिहारी ।
अंग रज छाजत छुअत नैनन में कंज छटी कर धारी ।
निरखत नन्द ग्वाल सब निरखत, निरखत सबै ब्रजनारी ।।

६. सौभाग्यकुंवरी (र० का० सं० १९४६ से २००५ तक)

जोधपुर नरेश तख्तसिंह की पुत्री सौभाग्यकुंवरी का जन्म सं० १९२६ में हुआ । इनका विवाह बूंदी के राजा रघुवीरसिंह के साथ हुआ । इनकी लिखी 'सौभाग्य-बिहारी-भजनमाला' प्रकाशित हुई है । इसमें गुरुमहिमा, कृष्णलीला, वियोग-संयोग आदि भावों के पद मिलते हैं । कवयित्री के मन में कृष्ण के प्रति अगाध भक्ति है । उसने नंदलाल को अपने मन में बसा लिया है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

म्हारे मन बसिया नन्दलाल, वन माली म्हाने लागो छो व्हाला ।
मन्द मन्द मुख हास विराजत, बांके नयन विसाला ।
सुन्दर श्याम सलौनी सूरत, शोभित गल वनमाला ।
श्री सौभाग्य बिहारी छवि निरखत भई मैं निहाला ।।
कहै सौभाग्य कुंवरी कर जोरे, दीजै दरस दयाला ।

७. बाघेली रणछोर कुंवरी (र. का. सं. १९२३ से १९६३)

ये रींवा के महाराज विश्वनाथ के भाई बलभद्रसिंह की पुत्री और जोधपुर के महाराजा तख्तसिंह की रानी थीं। कहा जाता है कि इनके पिता राधाबल्लभ की मूर्त्ति को युद्ध में जाते समय साथ ले जाया करते थे, उसे ही कवयित्री अपने साथ जोधपुर लाई थी और उसकी प्रतिष्ठा करवा कर एक मन्दिर बनवाया था। कृष्ण के प्रति इनकी अटूट भक्ति थी। एक कवित्त देखिये—

आभा तो निर्मल होय सूरज किरण उगे ते,
चित्त तो प्रसन्न होय गोविन्द गुण गाये से।
पीतर तो उज्ज्ल होय, रेती के मांजे से,
हृदय में ज्योति होय, गुरु ज्ञान पाये से।।
भजन में विछेप होय, दुनियां की संगति से,
अनन्द अपार होय, गोविन्द के ध्याये से।
मन को जगावो अरु, गोविन्द के शरण आओ,
तिरने के ये उपाय, गोविन्द मन भाये से।

८. सम्मान बाई (र. का. सं. १९२५ के लगभग)

सम्मान बाई अलवर के रामनाथ कविया की पुत्री थी। इनके हृदय में कृष्ण के प्रति अटूट भक्ति-भावना थी। इन्होंने पति के रूप में ही ईश्वराधना की। इनका 'पतिशतक' बहुत ही प्रसिद्ध ग्रन्थ है। कृष्णबाललीलाविषयक दोहे, सवैये, पद आदि भी लिखे हैं।

९. रसिकबिहारी बनीठनी (र. का. सं. १७६७ से १८२२)

कवयित्री बनीठनी हिन्दी साहित्य के यशस्वी कवि किशनगढ़ के महाराज नागरीदास की दासी थी। उनके सम्पर्क से इनमें कृष्णभक्ति के भाव जागृत हुए। इनके कृष्ण-जन्मोत्सव, होली, राधाजन्म, पनघटलीला आदि से सम्बद्ध अनेक पद उपलब्ध होते हैं। कवयित्री ने अपने आपको राधा के रूप में मान करके कृष्ण के प्रति भावार्पण किया है। कृष्ण के बारे में लिखा हुआ उनका निम्न पद शील-मर्यादा के कारण अत्यन्त प्रभावक बन पड़ा है....

कैसे जल लाऊं मैं पनघट आऊँ।
होरी खेलत नंदलाडलो री, क्योंकर निबह न पाऊं।
वे तो निलज फाग मदमाते, हों कुलवधू कहाऊं।
जो छुअ अंग रसिक बिहारी, तौ हूं धरती फार समाऊं।।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. सुन्दरकंवरी बाई (र. का. सं. १८१७ से १८५३)

कवयित्री सुन्दरकंवरी बाई भक्त कवि नागरीदास की बहिन थीं। ये सदैव कृष्णभक्ति में लीन रहने वाली थीं। इनका विवाह राघवगढ़ के राजा बलभद्रसिंह के कुंवर बलवंतसिंह के साथ हुआ। साहित्यिक वातावरण में पली सुन्दरकंवरी बाई का झुकाव हरिभक्ति की ओर प्रारम्भ से ही रहा। इनके लिखे नेहनिधि, वृन्दावन गोपी माहात्म्य, रसपुंज, भावना-प्रकाश, संकेत युगल आदि ११ ग्रन्थ मिलते हैं। इन्होंने भावानुकूल विभिन्न छंदों में कृष्ण-राधा की लीलाओं का सरस वर्णन प्रस्तुत किया है।

११. छत्रकुंवरी बाई (र. का सं. १७०३ से १७९०)

कवयित्री छत्रकुंवरी बाई नागरीदास की पोती थीं। इनका विवाह कोटडे के खींची गोपालसिंह के साथ हुआ था। इनके लिखे प्रेमविनोद ग्रंथ में राधाकृष्ण की प्रेमलीलाओं का चित्रण है। रस की दृष्टि से इनकी कविताएँ शृंगाररस प्रधान हैं परन्तु इसमें भी भक्ति की सुखद सरिता प्रवहमान है। इनके लिये सांझी के पद बहुत ही सरस व मधुर हैं।

इस धारा की अन्य कवयित्रियों में बीरां (सं. १७५० से १८००) महारानी सोन कुंवरी (सं. १७४५ से १८००), दासी सुन्दर (१८ वीं शती का पूर्वार्द्ध), आनंदी देवी गोस्वामी (१८ वीं शती का पूर्वार्द्ध) आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

४. निर्गुण काव्यधारा की कवयित्रियाँ

सगुण काव्यधारा की भाँति निर्गुणकाव्यधारा भी जनमानस को प्रभावित करती रही है। गोरखनाथ और बाद में कबीर ने इस प्रवृत्ति को विशेष गति और गरिमा प्रदान की। इस काव्यधारा में मूर्त्तिपूजा का विरोध करते हुए पूजा के बाह्य विधि-विधानों का खण्डन किया गया है। ईश्वर की अद्वैतभावोन्मुखी उपासना पर विशेष बल देते हुए जातिवाद का खण्डन कर उपासना का द्वार सब वर्ण के लोगों के लिए खोल दिया गया। राजस्थान में निर्गुण मार्गी कई सन्त-सम्प्रदाय प्रतिष्ठित हुए जिनमें कवियों के साथ-साथ कई कवयित्रियाँ भी हुईं। इस धारा की प्रमुख कवयित्रियों का परिचय इस प्रकार है—

१. सहजो बाई (र. का. सं. १८ वीं शती)

कवयित्री सहजो बाई का जन्म अलवर में ढूंसर जाति के श्री हरप्रसाद के घर हुआ। चरनदासी सम्प्रदाय के प्रवर्तक चरणदासजी इनके गुरु थे। गुरु और ईश्वर के प्रति इनकी अटूट श्रद्धा थी। इनके ग्रंथ 'सहज प्रकाश' में गुरु महिमा और सांसारिक नश्वरता का मार्मिक वर्णन है। प्रभुनामस्मरण को महत्त्व देती हुई वे कहती हैं—

सहजो फिर पछतायेगी, स्वास निकसी जब जाय।
जब लग रहे शरीर में, राम सुमिर गुन गाय॥

२. दयाबाई (र. का. सं. १८०५ के आसपास)

कवयित्री दयाबाई सहजोबाई की बहिन थीं। ये बड़ी विदुषी महिला थीं। इनके गुरु भी चरणदास जी थे। इनकी अपने गुरु के प्रति अटूट श्रद्धा थी। उन्हीं की कृपा से इन्हें दिव्य

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञान प्राप्त हुआ था। संसार की नश्वरता और ईश्वर तक पहुँचाने वाले दृढ़प्रतिज्ञ शूरवीर भक्तों का वर्णन वैराग्य अंग और 'सूर अंग' में बड़ी सुन्दरता से हुआ है। 'दयाबोध' और 'विनयमालिका' दो ग्रंथ उपलब्ध होते हैं। एक उदाहरण देखिये—

सोवत जागत हरि भजो, हरि हिरदे न बिसार।
डोरी गहि हरि नाम की, दया न टूटे तार॥

३. गवरी बाई (र० का० सं. १८३५ से १८९५)

कवयित्री गवरीबाई ने डूंगरपुर के नागर ब्राह्मण कुल में जन्म लिया। इनके माता-पिता प्रभुभक्त थे। उनकी इस भक्ति-भावना का बालिका गवरी पर गहरा प्रभाव पड़ा। गवरी-बाई बाल्यकाल से ही पतिसुख से वंचित हो गई थीं, परिणाम स्वरूप उन्होंने समस्त जीवन ईश्वरभक्ति-भावना में व्यतीत किया। इनके लिखे हुए करीब ६१० पदों का एक संग्रह उपलब्ध होता है जिसमें गवरी बाई की भक्ति भावना, विद्वत्ता और आराध्य के प्रति अनन्य भावना का पता लगता है। निर्गुण शाखा के कवियों में जो स्थान सुन्दरदास का है वही स्थान निर्गुण शाखा की कवयित्रियों में गवरीबाई का है। वे तो कहती हैं—

प्रभु मोको एक बेर दर्शन दइये।
हीरा, मानक, गरध भण्डारा, माल मुलक नहीं चहिये।

४. उमा (र. का. सं. १८ वीं शती का उत्तरार्द्ध)

कबीर के राम की भाँति इनका राम दशरथसुत न होकर निर्गुण ब्रह्म है। वे उसके संग फाग खेलती हुई गाती हैं—

ऐसे फाग खेले राम राय,
सुरत सुहागण सम्मुख आय।
पंच तत्त को बन्यो है बाग,
जामें सामन्त सहेली रमत फाग।
जह राम झरोखे बैठे आय।
प्रेम पसारी प्यारी लगाय॥

५. रूपां दे (र. का. सं. १५ वीं शती का मध्यकाल)

संत कवयित्री रूपां दे राजा मल्लिनाथ की पत्नी थी। इनके गुरु का नाम उगमसी भाटी था। जाति पाँति के बंधन तोड़ कर ये रामदेव जी के मंदिर में जाया करती थीं और प्रसाद लेती थीं। कवयित्री की इन गतिविधियों से राजा मल्लिनाथ की अन्य रानियाँ अप्रसन्न रहती थीं। पर रूपां दे का इन सांसारिक बातों से कोई लेना देना नहीं था। वे तो सांसारिक भोगों एवं भौतिक ऐश्वर्य की नश्वरता को नकारती हुई कहती हैं—

पैला जैसी प्रीत सवाई कोनी रयसी रै।
नैम धरम थारां छानां कोनी रयसी रै।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. जन बेगम (र० का० सं० १८३५)

निर्गुण सम्प्रदाय की कवयित्रियों में जन बेगम का नाम भी बड़े गौरव के साथ लिया जाता है। ये अलवर के दोली गाँव की रहने वाली और चरणदासीसम्प्रदाय के सन्त छौना की शिष्या थीं। इनका लिखा 'सुदामाचरित' भक्तिभावभरा सरस ग्रन्थ है। इसमें कवयित्री ने गुरु और ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धा व्यक्त की है।

७. स्वरूपा बाई (र० का० सं० १८ वीं शती का उत्तरार्द्ध)

ये रामस्नेहीसम्प्रदाय के प्रवर्तक रामचरण जी महाराज की शिष्या थीं। इनका राजस्थानी भक्तिसाहित्य के विकास में बड़ा योग रहा। सांसारिक नश्वरता एवं गुरुभक्ति इनकी कविता का मुख्य स्वर है।

इस धारा की अन्य कवयित्रियों में बाई खुशाल (सं०१८३४), तोला दे, काजल दे, गोरांजी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

५. जैन काव्यधारा की कवयित्रियाँ

भारतीय धर्मपरम्परा में साधुओं की तरह साध्वियों का भी विशेष योगदान रहा है। जैनधर्म भी इसका अपवाद नहीं। ऐतिहासिक परम्परा के रूप में हमें भगवान् महावीर के बाद के साधुओं की आचार्यपरम्परा का तो पता चलता है पर उनकी साध्वियों की परम्परा अन्धकाराच्छन्न है। भगवान् महावीर के समय में ३६,००० साध्वियों का नेतृत्व करने वाली साध्वी चन्दनबाला का उल्लेख शास्त्रों में आता है। महावीर से ही तत्त्वचर्चा करने वाली जयन्ती का उल्लेख भी हमें मिलता है। यह तो निश्चित ही है कि साधुओं और श्रावकों के साथ-साथ श्राविकाओं की भी अविच्छिन्न परम्परा रही है और इन साध्वियों ने भी साधुओं की भाँति साहित्य के निर्माण एवं संरक्षण में महत्त्वपूर्ण योग दिया है। मध्यकाल की जिन जैन कवयित्रियों का हमें उल्लेख मिलता है उनका संक्षेप में परिचय इस प्रकार है—

१. गुणसमृद्धि महत्तरा (र० का० सं० १४७७)

ये खरतरगच्छी जिनचन्द्र सूरि की शिष्या थीं। इनके द्वारा प्राकृत भाषा में रचित ५०२ श्लोकों का 'अंजणासुन्दरीचरियं' ग्रन्थ जैसलमेर के भण्डार में विद्यमान है। इसमें हनुमानजी की माता अंजनासुन्दरी का चरित वर्णित है।

२. विनयचूला (र० का० सं० १५१३ के आसपास)

ये साध्वी आगमगच्छी हेमरत्न सूरि के सम्प्रदाय की हैं। इन्होंने हेमरत्न सूरि गुरु फागु नाम से ११ पद्यों में रचना की।

३. पद्मश्री

इनका सम्बन्ध भी आगमगच्छ से रहा है। श्री मोहनलाल दलीचन्द दौसाई ने जैन गुर्जर कविओ भाग ३ खण्ड १ के पृष्ठ ५३५ पर इनकी रचना 'चारुदत्तचरित्र' का उल्लेख किया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. हेमश्री (र० का० सं० १६४४)

ये साध्वी बड़तपगच्छ के नयसुन्दर जी की शिष्या थीं। 'जैन गुर्जर कविओ' भाग १ में पृष्ठ २८६ पर इनकी एक रचना 'कनकावती आख्यान' का उल्लेख मिलता है। यह ३६७ छन्दों की रचना है।

५. हेमसिद्धि (र० का० सं० १७वीं शती)

इनका सम्बन्ध खरतरगच्छ से था। श्री अगरचन्द नाहटा ने 'ऐतिहासिक जैनकाव्य संग्रह' के पृष्ठ २१० और २११ पर इनके दो गीतों का, उल्लेख किया है। पहली रचना है लावण्य-सिद्धि पहुतणी गीतम्' इसमें साध्वी लावण्यसिद्धि का परिचय दिया गया है। इनकी दूसरी रचना 'सोमसिद्धिनिर्वाणगीतम्' है। इसमें कवयित्री का सोमसिद्धि के प्रति गहरा स्नेह और भक्ति-भाव प्रकट हुआ है।

६. हरकू बाई (र० का० सं० १८२०)

ये स्थानकवासी परम्परा से सम्बद्ध हैं। महासती श्री अमरूजी का चरित्र व 'महासती श्री चतरूजी सज्झाय' नाम से इनकी दो रचनाएँ उपलब्ध हैं।

७. हुलासाजी (र० का० सं० १८८७)

ये स्थानकवासीपरम्परा के पूज्य श्रीमलजी म० से सम्बद्ध हैं। क्षमा, तप आदि विषयों पर इनके कई स्तवन मिलते हैं।

८. जड़ावजी

ये स्थानकवासी परम्परा के आचार्य श्री रतनचन्द जी म० के सम्प्रदाय की प्रमुख श्रीरमा जी की शिष्या थीं। इनका जन्म सं० १८९८ में सेठों की रीयां में हुआ था। सं० १९२२ में ये दीक्षित हुईं। नेत्रज्योति क्षीण होने से सं० १९५० से अन्तिम समय सं० १९७२ तक ये जयपुर में ही स्थिरवासी बनकर रहीं। इनकी रचनाओं का एक संग्रह 'जैनस्तवनावली' नाम से प्रकाशित हुआ। इसमें इनकी स्तवनात्मक, कथात्मक, उपदेशात्मक और तात्त्विक रचनाएँ संकलित हैं। सांगरूपक लिखने में इन्हें विशेष सफलता मिली है। एक उदाहरण देखिये—

ज्ञान का घोड़ा, चित्त की चाबुक, विनय लगाम लगाई।
तप तरवार भाव का भाला, खिम्मा ढ़ाल बंधाई।

९. भूरसुन्दरी (र० का० सं० १९८० से १९८६)

इनका सम्बन्ध स्थानकवासीपरम्परा से है। इनका जन्म संवत् १९१४ में नागौर के समीप बुसेरी नामक गाँव में हुआ। इनके पिता का नाम अखयचन्दजी रांका तथा माता का नाम रामा बाई था। अपनी भुआ से प्रेरणा पाकर ११ वर्ष की अवस्था में साध्वी चंपाजी से ये दीक्षित हो गईं। इनके ६ ग्रन्थ प्रकाशित मिलते हैं—भूरसुन्दरी जैनभजनोद्धार, भूरसुन्दरी विवेकविलास, भूरसुन्दरी बोधविनोद, भूरसुन्दरी अध्यात्मबोध, भूरसुन्दरी ज्ञानप्रकाश, भूरसुन्दरी विद्याविलास। इनकी रचनाएँ मुख्यतः स्तवनात्मक व उपदेशात्मक हैं। इन्होंने पहेलियाँ भी लिखी हैं। एक उदाहरण देखिये—

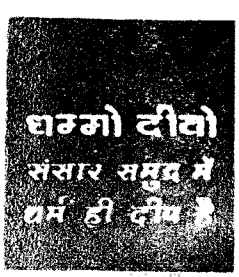

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आदि अखर बिन जग को ध्यावे, मध्य अखर बिन जग संहारे ।
अन्त अखर बिन लागत मीठा, वह सबके नयनों में दीठा । उत्तर—काजल

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य की वीर, शृंगार, भक्ति एवं अध्यात्म की विविधरूपा काव्यधारा को समृद्ध एवं पुष्ट बनाने में राजस्थान की कवयित्रियों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है ।[1]

—सी-२३५ ए तिलक नगर, जयपुर-४

१. इस निबन्ध को तैयार करने में "प्रेरणा" (फरवरी १९६३) के 'राजस्थानी कवयित्रियाँ' विशेषांक से सहायता ली गई है । इसके लिए लेखिका, सम्पादक श्री दीनदयाल ओझा के प्रति आभार व्यक्त करती है ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org